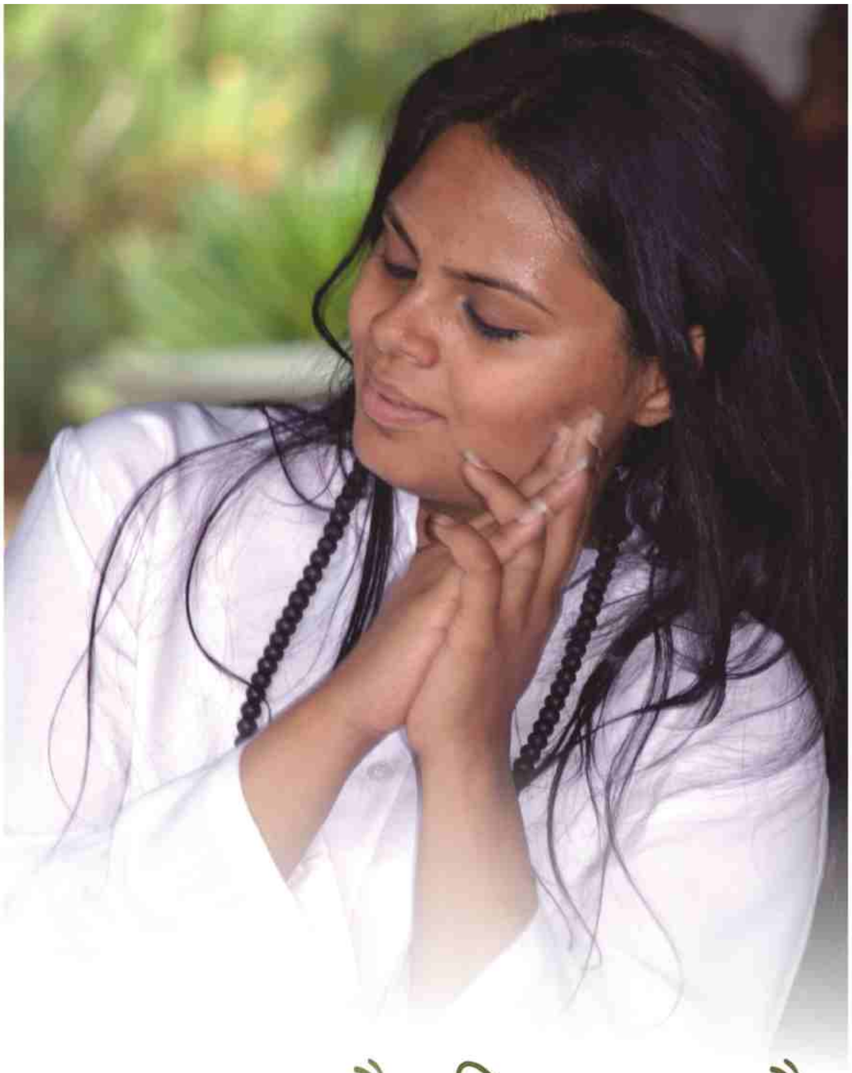

स्वभाव में डूब जाना सुख है। अपने स्व में निमग्न हो जाना सुख है। स्वभाव सुख है, विभाव दुख है। तो जितने तुम अपने से दूर जाते हो–धन में, पद में, प्रतिष्ठा में–उतने ही तुम दुखी होते चले जाते हो। संसार का अर्थ ये वृक्ष नहीं, ये चांद-तारे नहीं; संसार का अर्थ है मन की बाहर जाती हुई दौड़

भाव में अभाव

स्वभाव सुख है, विभाव दुख है

जुज़ मर्तबए कुल को हासिल करे है आखिर,
एक कतरा ने देखा जो दरिया न हुआ होगा।

एक बूंद भी ऐसी नहीं है अस्तित्व में जो कल सागर न हो जाये। अंश अंशी हो जाता है, खंड अखंड हो जाता है, सीमित असीम हो जाता है। एक बूंद भी ऐसी नहीं है जिसकी नियति में सागर होना न हो, तो फिर मनुष्य भी कैसे हो सकता है जो परमात्मा होने से वंचित रह जाए?

परमात्मा होना मनुष्य का स्वभाव है। जैसे बूंद सागर हो सकती है, ऐसे मनुष्य सीमाओं से मुक्त हो जाये तो परमात्मा हो सकता है। मनुष्य परमात्मा है, सिर्फ सीमायें गिराने की बात है। मनुष्य के परमात्मा होने में कोई बाधा नहीं है; हमने चारों तरफ एक लक्ष्मण-रेखा खींच रखी है। हमारी खींची हुई रेखा है; हम ही उस रेखा के बाहर नहीं जाते; हमने ही दीवाल बना ली है; हमने ही सुरक्षा का आयोजन कर लिया है; हम ही ज्ञात में आबद्ध हो गए हैं। अज्ञात पुकारता है, पर भय के कारण हम यात्रा पर नहीं निकल पाते।

योग की यात्रा अज्ञात की यात्रा है। लेकिन अज्ञात की यात्रा पर तो वही जायेगा जो ज्ञात से थक गया। तुमने जो जाना है, उससे मन भरा?

अगर मन भर गया है तब तो परमात्मा तक जाने का कोई सवाल नहीं उठता; परमात्मा तुम्हें मिल ही गया। मन भर जाने का नाम ही तो परमात्मा का मिलना है। मन भरा नहीं है। मन जरा

सीता को गंवा बैठे राम–रावण के कारण नहीं; स्वर्ण-मृग को खोजने निकल पड़े, इस कारण। अगर तुम मुझसे पूछो तो रावण ने सीता चुरायी यह बात गौण है; राम ने सीता गंवायी, यह बात महत्वपूर्ण है। थोड़ा सोचो तो, तुम भी होते तो सोचते कि कहीं सोने का मृग होता है, कभी हुआ है?

भी भरा नहीं है। खाली का खाली है। सिर्फ आशायें—कल भर जायेगा, परसों भर जायेगा—उलझाये रखती हैं। सिर्फ आश्वासन झूठे, जो कभी पूरे नहीं होते; किसी के कभी पूरे नहीं होते।

कल मैं एक लोकप्रिय गीत सुन रहा था—

जाने वो कैसे लोग थे जिनके प्यार को प्यार मिला

ऐसे लोग कभी नहीं हुए जिनके प्यार को प्यार मिला हो। इस संसार में कभी कोई तृप्ति को उपलब्ध नहीं हुआ।

जाने वे कैसे लोग थे जिनके प्यार को प्यार को मिला
हमने तो जब कलियां मांगीं, कांटों का हार मिला
खुशियों की मंजिल ढूंढी तो गम की गर्द मिली
चाहत के नग्मे चाहे तो आहें सर्द मिली
दिल के बोझ को दूना कर गया, जो गमख्वार मिला
बिछुड़ गया हर साथी देकर पल दो पल का साथ
किसको फुर्सत है जो थामे दीवानों का हाथ
हमको अपना साया तक अकसर बेजार मिला
इसको ही जीना कहते हैं तो यूं ही जी लेंगे
उफ न करेंगे, लब सी लेंगे, आंसू पी लेंगे
गम से अब घबड़ाना कैसा? गम सौ बार मिला
जाने वो कैसे लोग थे जिनके प्यार को प्यार मिला
हमने तो जब कलियां मांगीं कांटों का हार मिला

ऐसे लोग कभी हुए ही नहीं। यहां तो जिसने भी कलियां मांगी हैं, उसी को कांटों का हार मिला है। इस संसार में कांटों के सिवाय कुछ और है ही नहीं। हां, दूर से फूल दिखाई पड़ते हैं, पास आने पर कांटे सिद्ध होते हैं। जो नहीं मिला है प्यारा लगता है; जो मिल जाता है वही व्यर्थ हो जाता है। अभाव में आकर्षण है। दूर के ढोल सुहावने हैं।

योग की यात्रा पर तो वही निकलेगा जिसे यह बात बिलकुल साफ हो गई कि यहां सुख मिलना संभव नहीं है। सुख असंभव है संसार में। क्योंकि संसार का अर्थ होता है बहिर्यात्रा—अपने से बाहर जाना। और अपने से बाहर जाकर कोई कभी सुख को उपलब्ध न हो सकेगा। क्योंकि जितने तुम अपने से दूर हो जाओगे उतने ही स्वभाव के प्रतिकूल हो जाओगे। और स्वभाव में डूब जाना सुख है। अपने स्व में निमग्न हो जाना सुख है। स्वभाव सुख है, विभाव दुख है। तो जितने तुम अपने से दूर जाते हो—धन में, पद में, प्रतिष्ठा में—उतने ही तुम दुखी होते चले जाते हो। संसार का अर्थ ये वृक्ष नहीं, ये चांद-तारे नहीं; संसार का अर्थ है मन की बाहर जाती हुई दौड़। बहिर्यात्रा संसार है। अंतर्यात्रा धर्म है।

जरा अपने जीवन को गौर से देखो, विचारो, तो ही गोरख के ये अमृत शब्द समझ में आ सकेंगे। गोरख के ही क्यों, समस्त बुद्धपुरुषों के वचन इसलिए तुम्हारे काम नहीं आते, कि तुमने अपने जीवन का निरीक्षण नहीं किया। अभी भी तुम्हारी आशायें शेष हैं। अभी भी तुम्हारी आशायें खंडित नहीं हुई हैं।

धोखा है तमाम बहरे-दुनिया
देखेगा तो होंठ तर न होगा।

दिखाई पड़ता है, जल लहरें ले रहा है; पर दूर से दिखाई पड़ता है। मृग-मरीचिका है। और जब पास जाओगे होंठ तर भी न हो सकेंगे। कंठ तक तो पहुंचने की बात दूर, होंठ भी तर हो सकेंगे।

सब्ज होती ही नहीं यह सरज़मी,
तुख्मे-ख्वाहिश दिल में तू बोता है क्या?

इस जमीन पर हरियाली कभी होती ही नहीं। तू नाहक ही इच्छाओं के बीज बो रहा है अपने दिल में। बहुत पछताएगा। ये बीज कभी अकुंरित होते नहीं।

सब्ज होती ही नहीं यह सरज़मी,
तुख्मे-ख्वाहिश दिल में तू बोता है क्या?

क्यों बोये चले जाते हो नई-नई आकांक्षाओं के बीज? पुराने बीज नहीं उपजते तो तुम नए बीज बो देते हो। ऐसा जन्मों-जन्मों से कर रहे हो।

पास के गये पै एक बूंद हू न हाथ लगै,
दूर सों दिखात मृगतृष्णिका में पानी है।
शंकर प्रमाण-सिद्ध रंग को न संग पर,
जानि परै अंबर में नीलिमा समानी है।
भाव में अभाव है अभाव में धौं भाव भर्‍यो,
कौन कहे ठीक बात काहू ने न जानी है।

बहुत उलझन है इस जगत की। भाव में अभाव है। जो होता है वह तो भूल जाता है। जो है वह तो दिखाई नहीं पड़ता। भाव में अभाव है अभाव में धौं भाव भर्‍यो। और जो नहीं है उसमें हमारे भाव उलझे रहते हैं। जो तुम्हारे

पास नहीं है उसमें तुम अटके हो; जो तुम्हारे पास नहीं हैं उसमें तुम अटके हो, यह बात तो तुम जानकर हैरान होओगे।

लोग सोचते हैं कि जो हमारे पास नहीं है उसमें हम अटके हैं; गलत है। जो तुम्हारे पास है उसमें तो तुम जरा भी नहीं अटके हो; जो तुम्हारे पास नहीं है उसमें अटके हो। तुम्हारे पास दस हजार रुपये हैं, उनमें तुम नहीं अटके हो; दस लाख, जो अभी तुम्हारे पास नहीं है, उनमें तुम अटके हो। तुम यह दस हजार छोड़ भी दो तो कुछ लाभ न होगा। जब तक वे दस लाख न छूट जायें जो तुम्हारे पास नहीं हैं...।

यह जरा बड़ी उलटी सी बात मालूम होगी कि जो नहीं है, उसमें हम उलझे हैं। जो पत्नी तुम्हारे पास है उसमें तुम नहीं उलझे हो; उससे तो तुम कब के मुक्त हो गए हो; उसे तो तुमने देखना ही बंद कर दिया है। उसे तो तुम पहचान भी न सकोगे। कितने दिन हो गए, कितने वर्ष, जब से तुमने पत्नी को देखा नहीं है भर आंख! अपनी पत्नी को देखता ही कौन है! दूसरों की पत्नियों को लोग देखते हैं।

जो तुम्हारे पास नहीं है, उससे तुम उलझे हो। अभाव ने उलझाया है। इसलिए सदगुरु का बड़ा बेबूझ काम है। वह तुमसे वही छीन लेता है जो तुम्हारे पास नहीं है। और तुम्हें वही दे देता है जो तुम्हारे पास है। पास जाकर पाओगे बूंद भी नहीं है वहां, जहां सागर लहराता मालूम पड़ता था।

यह धोखा ऐसे ही है जैसे आकाश नीला दिखाई पड़ता है। बस दिखाई पड़ता है; आकाश का कोई रंग नहीं है। आकाश कोई वस्तु थोड़े ही है कि उस पर रंग पोता जा सके। आकाश तो शून्य का नाम है। शून्य को कैसे रंगोगे? आकाश नीला दिखाई भर पड़ता है।

शंकर प्रमाण-सिद्ध रंग को न संग पर,
जानि परै अंबर में नीलिमा समानी है।

पक्का प्रमाण है इसका, अब वैज्ञानिक प्रमाण है कि आकाश में कोई रंग नहीं होता, लेकिन फिर भी नीला दिखाई पड़ता है। और मरुस्थल में जब तुम प्यास से विदग्ध हो रहे हो, तुम्हारी प्यास ही मृग-मरीचिकाएं पैदा कर लेती है। और साधारण आदमी की तो बात छोड़ दो, असाधारण पुरुष भी मृग-मरीचिकाओं में पड़ जाते हैं। राम तक स्वर्ण-मृग को पकड़ने निकल पड़े। स्वर्ण-मृग होते हैं? कभी हुए हैं?

कथा प्यारी है। सीता को गंवा बैठे राम—रावण के कारण नहीं; स्वर्ण-मृग को खोजने निकल पड़े, इस कारण। अगर तुम मुझसे पूछो तो रावण ने सीता चुरायी यह बात गौण है; राम ने सीता गंवायी, यह बात महत्वपूर्ण है। थोड़ा सोचो तो, तुम भी होते तो सोचते कि कहीं सोने का मृग होता है, कभी हुआ है? लेकिन स्वर्ण-मृग दिखाई पड़ा, चले राम खोज पर। उठा लिया धनुष-बाण। छोड़ गए सीता को। जो था उसे छोड़ गए—उसके लिए, जो नहीं है; और जो कभी हुआ नहीं और जो कभी हो भी नहीं सकता। बुद्धि जिसके बिलकुल विपरीत है, विचार जिसके विपरीत है, समझ जिसके विपरीत है—उस स्वर्ण-मृग को खोजने चल पड़े।

स्वयं को जाने बिना कोई सुख नहीं है। स्वयं को जाने बिना कोई संगीत नहीं है। स्वयं को जाने बिना कोई अमृत का स्वाद नहीं है

मगर कथा प्रीतिकर है। ऐसे ही तो हम सब भी स्वर्ण-मृग को खोजने निकले हैं, और सीताओं को गंवा बैठे हैं। सीता यानी तुम्हारी आत्मा, जो तुम्हारे पास है। उसे तो तुम भूल ही गए हो। उसकी तरफ तो पीठ कर ली है। चले स्वर्ण-मृग की तलाश में—पद प्रतिष्ठा, धन, यश, गौरव। ये सब स्वर्ण-मृग हैं—जो न कभी हुए हैं, न कभी होते हैं।

हस्ती अपनी हुबाब की सी है,
यह नुमाइश शराब की सी है।
चश्मे-दिल खोल उस भी आलम पर,
यांकी औकात खाब की सी है।

जरा अपना हृदय उस परलोक की तरफ भी खोलो, क्योंकि यहां तो सब है जो सपने जैसा है। चश्मे-दिल खोल उस भी आलम पर। दिल की आंख उस सत्य की तरफ भी खोलो, घूंघट हटाओ, पर्दे उठाओ। यांकि औकात खाब की-सी है! क्योंकि यहां की जो सत्ता है इस संसार की, वह एक स्वप्न से ज्यादा नहीं है। हस्ती अपनी हुबाब की-सी है। एक बुलबुले जैसी हस्ती है। पानी का बुलबुला, अभी बना अभी मिटा। यह नुमाइश शराब की-सी है। यह तो मृग-जल जैसा प्रदर्शन चल रहा है—झूठा; मान लिया इसलिए है।

और लोग क्या-क्या मान नहीं लेते हैं! हमारा सारा संसार हमारी मान्यताओं से निर्मित है। हमने मान लिया है। सारी बात मानने की है। और मान लिया है तो चलते चले जाते हैं। जिसने नहीं माना है वैसा, वह हंसेगा।

जिस आदमी को धन की दौड़ लगी है, उसके लिए धन सत्य है। और जिसको धन की दौड़ नहीं लगी है, वह हंसेगा कि तुम पागल हो, धन का करोगे क्या, धन से होगा क्या? सब पड़ा रह जाएगा। जिसकी मान्यता नहीं है, वह बड़ा हैरान होता है कि तुम किस चीज के पीछे दौड़ रहे हो! लेकिन जिसकी मान्यता है उसकी आंखों में नशा है; वह होश में नहीं है।

यह संसार हमारी कामना, हमारी तृष्णा, हमारी दौड़, हमारी महत्वाकांक्षा का परिणाम है। और जो इस महत्वाकांक्षा के ज्वर से नहीं जागेगा, वह कभी पहचान न पायेगा स्वयं को। स्वयं को जाने बिना कोई सुख नहीं है। स्वयं को जाने बिना कोई संगीत नहीं है। स्वयं को जाने बिना कोई अमृत का स्वाद नहीं है।

—ओशो

मरौ हे जोगी मरौ
प्रवचन नं. 9 से संकलित
(पूरा प्रवचन टेप पर उपलब्ध है)